International Journal of Scientific Research in Science and Technology
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X (www.ijsrst.com)
doi : https://doi.org/10.32628/IJSRST

पाठशोध या पाठालोचनः शोध की महत्वपूर्ण दिशा

दिग्विजय कुमार राय
एसोसिएट प्रोफेसर बी0.एस.एन.वी पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज लखनऊ

Article Info
Volume 8, Issue 6
Page Number : 580-584

Publication Issue
November-December-2021

Article History
Accepted : 15 Dec 2021
Published : 30 Dec 2021

सारांश

साहित्य में शोधकार्य मुख्यतः किसी रचना की अन्तरंग मूल्यवत्ता के उद्घाटन के रूप में ही होता है जिसे वस्तुतः शोधपूर्ण समीक्षा कहा जा सकता है। किसी रचना के द्वारा इतिहास की तलाश या तत्कालीन सामाजिक ताने–बाने का उद्घाटन अवश्य 'शोध' का विषय है। पर साहित्य का एक क्षेत्र निश्चय ही 'शोध' की परिभाषा को चरितार्थ करता है वह है पाठशोध या पाठालोचन । इसी प्रकार किसी पाठ की अर्थ–परंपरा की तलाश भी महत्त्वपूर्ण शोध है। रामचरितमानस की बिहारी सतसई की तथा ऐसे ही लोकप्रिय ग्रंथों की अनेक टीकाएँ हुई हैं, जो उसके विविध अन्तरंग अर्थो का उद्घाटन करती हैं, उनके तुलनात्मक अध्ययन विवेचन के द्वारा पुरानी सामग्री का नवोद्घाटन भी शोध का विषय हो सकता है। प्रस्तुत आलेख पाठालोचन पर आधारित है।

विषय संकेतः पाठशोध या पाठालोचनः शोध

प्रस्तावनाः–

पाठानुसंधान के प्रयास भी सभी भाषाओं में हुए हैं। इस दिशा में शोधकर्त्ताओं के अनुभवों ने धीरे–धीरे एक शास्त्र का रूप ग्रहण कर लिया और वैज्ञानिक चिन्तन की इस प्रणाली ने इस शास्त्र का उत्तरोत्तर विकास भी किया है। इस कार्य के सम्बन्ध में योरोप में महनीय प्रयास हुए। उसे अपनाकर व्यापक बनाने में योरोपीय विद्वानों ने बड़ा कार्य किया।

अंग्रेजी भाषा में क्रमिक अनुभव द्वारा यह शास्त्र अट्ठारहवीं – उन्नीसवी सदी में विकसित हुआ । विशेषतः चॉसर, स्पेन्सर और शेक्सपियर की कृतियों का पाठ संपादन हुआ। चॉसर की कृतियों पर टरहिट नामक विद्वान का कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस कार्य का मूल्यांकन करते हुए डा० लीलाधर गुप्त ने लिखा है–

''पहले कई सौ वर्ष तक कैक्सटन, टाइन, स्टो, स्पेट और यूरी इत्यदि संपादकों ने चांसर का पाठ आलोचनात्मक वृत्ति से स्वीकार किया। इसके पश्चात् अट्ठाहरवीं शताब्दी के पिछले भाग में टरहिट ने अंग्रेजी साहित्य प्रेमियों को चॉसर का आलोचनात्मक संस्करण दिया। टरहिट ने इस कार्य को बड़े परिश्रम से किया। पहले उसने

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

चॉसर के पाठ की जितनी प्रतियाँ और प्रतिलिपियाँ मिल सकती थीं, इकट्ठा कीं। फिर उसने चॉसर का और चॉसर के समकालीन और पूर्ववर्ती लेखकों का सचेष्ट अध्ययन किया, और इंग्लैण्ड के लेखकों का ही नहीं वरन् फ्रांस और दूसरे देशों का भी। उसके परिश्रम का अंदाजा लगाने के लिये यह याद रखने की बात है कि यह सब अध्ययन हस्तलिखित प्रतियों में हुआ। अन्त में उसने बड़ी सावधानी से चॉसर के पद्यों का संवदेनशील और सुशिक्षित श्रवणेन्द्रिय द्वारा अध्ययन किया। टरहिट के परिश्रम के परिणामस्वरूप ही साधारण पाठक चॉसर को उसके असली रूप में देख सका और जहाँ तक 'कैण्टरबरी टेल्स' की बात है टरहिट के संस्करण में उस कवि की, पाठक को ठीक प्रतिभा मिली।'' आगे चलकर निकोलस, राइट आदि कई विद्वानों का ध्यान चॉसर के पाठों की ओर गया और चॉसर सोसायटी की स्थापना हुई इस सोसायटी ने निश्चित सिद्धान्तों के आधार पर उनकी रचनाओं के पाठ का पुनर्निर्माण कराया।

आलोचनात्मक संस्करण 1715 वि में प्रकाशित हुआ। स्पेन्सर की कृति 'फेअरी क्वीन' का प्रथम आलोचनात्मक संस्करण 1715 ई० कृतियों के अन्य आलोचनात्मक संस्करणों में डॉ) ग्रीसअर्ट, ग्लोब और संलिकोर्ट के संस्करण महत्त्वपूर्ण हैं। हुआ।

शेक्सपियर की अधिकांश कृतियाँ उसके जीवन काल में अप्रकाशित रह गयी थीं। उनके नाटकों का प्रचलन नाटक – मण्डलियों में बहुत अधिक होने के कारण उसके नाटकों के पाठ बहुत क्षत–विक्षत हुऐ। उनके नाटकों के पाठों का निर्माण प्रारम्भ में नाटक मण्डलियों में प्रचलित पाठों के आधार पर हुआ जो शेक्सपियर की प्रतिभा को बिगाड़ने वाले थे। हस्तलिखित प्रतियों के पाठ अपूर्ण और असंतोषजनक थे। प्रारम्भ में शेक्सपियर की रचनाओं का पाठ मुद्रकों के हाथ में था और वे यथा प्राप्त पाठकों को मुद्रित कर देने में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते थे। शेक्सपियर की कृतियों का प्रथम आलोचनात्मक संस्करण 1709 ई0 में 'रो' नामक विद्वान ने निकाला। 'रो' के कार्य का अनुगमन करते हुये शेक्सपियर के पाइ निर्माण का महत्त्वपूर्ण कार्य अट्ठारहवीं शताब्दी में थिओबोल्ड, पोप, जान्सन, कैंपेल, स्टीवेंस और मैलान आदि द्वरा आगे बढ़ाया गया। उन्नीसवीं शताब्दी में बासवेल, फरनैस, क्लार्क और राइट तथा बीसवीं शताब्दी में बिलवर कूल और डोवरविल्सन ने शेक्सपियर का आलोचनात्मक संस्करण प्रस्तुत किया।

अंग्रेजी भाषा के रचनाकारों के पाठ–निर्माण की दिशा में इस शास्त्र के सिद्धान्त क्रमिक विकास की प्रक्रिया में निर्मित हुए। पहले जो प्रति प्राप्त हो जाती थी, वह यथावत् मुद्रित हो जाती थी। आगे चलकर पाठ – सम्पादक कई प्रतियों के परीक्षण द्वारा सर्वोत्तम प्रति को प्राप्त करने का प्रयास करता था और सम्पादन के नाम पर वह ऐसी प्रति में मनमाने संशोधन प्रस्तुत कर देता था। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक वह पद्धति चलती रही।

अट्ठाहरवीं शताब्दी के अन्त में टरहिट ने 'कैण्टरबरी टेल्स' के पाठ को सत्तर से अधिक हस्तलिखित प्रतियों में से सात मुद्रित प्रतियों के पुनर्निरीक्षण से दुबारा निर्माण किया। इन सातों में सर्वश्रेष्ठ उल्समेअर की प्र को चुनकर अन्य प्रतियों से मिलाकर उसके पाठ को संशुद्ध और संशोधित करके पाठ– निर्माण किया गया। पर इससे सुन्दर कार्य 1842 ई0 में 'न्यू टेस्टामेण्ट' के सम्पादन के रूप में 'कार्ल लैकमैन' ने किया। लैकमैन ने पाठ परीक्षा की एक सुनिश्चित पद्वति का प्रतिपादन किया। आगे चलकर इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य करने वालों ने जो योगदान प्रस्तुत किया उसे पाठ संपादन का यह शास्त्र विकसित होता गया। इस क्षेत्र में योरोपीय विद्वानों की सारणियों का संक्षिप्त परिचय आवश्यक हैं।

कार्ल लैकमैन ने पाठानुसंधान की जिस प्रणाली को प्रचलित किया, वह इस क्षेत्र की प्राचीनतम विधि है। इस प्रणाली को वंशानुक्रम पद्धति (ळमवसवहपबंस उमजीवक) कहा जाता हैं। इस प्रणाली ने बड़ी लोकप्रियता प्राप्त की। इस पद्धति का मुख्य सिद्धान्त यह है कि जिन प्रतियों में एक सी पाठ विकृतियाँ मिलती हैं उनकी आदर्श या पूर्वज प्रति एक ही होती हैं और जहाँ समान पाठ विकृतियाँ न भी मिलें पर विशेष पाठों की उपलब्धि में प्रतियाँ समान हों उनकी पूर्वज प्रति भी एक होती है। जहाँ विशेष पाठ भी न हों और प्रतियाँ सामान्य पाठों में ही समान हों, उनकी एक पूर्वज प्रति होती है।.

इस प्रणाली के अनुगमन द्वारा प्राचीनतम पाठ–परम्परा की प्रतियों का पता लग जाता है और यह निश्चित हो जाता है कि किस प्रति का पाठ पूर्ववर्ती है और किसका परवर्ती है। इससे मूलपाठ निर्धारण की प्रक्रिया में ग्रहण किये जाने वाले साक्ष्य की गरिमा और महत्ता का वर्गीकृत अन्तर हो पाता है और संशुद्ध पाठ निर्धारण में बड़ी सहायता मिलती है। इस कार्य को सामग्री विवेचन, पाठचयन, पाठ–सुधार और उच्चतर आलोचना चार सीढ़ियों में पूर्ण किया जाता है। देखने में यह प्रणाली स्वतः सिद्ध एवं निरापद लगती है, पर व्यावहारिक क्षेत्र में पाठानुसंधाता को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वस्तुस्थिति यह है कि यह विधि बड़े सरल पाठ – सम्बन्धों की स्थिति में तो सुविधाजनक एवं कारगर हो जाती है पर जहां पाठ सम्बन्ध जटिल होते हैं वहाँ अनुसंधाता अपनी स्थापनाओं और तर्कों का सहारा लेकर चलता है।फिर भी कार्ल लैकमैन की इस प्रणाली ने मूलतः पाठानुंधान को एक वैज्ञानिक अध्ययन का स्वरूप प्रदान किया और उन्हीं मौलिक सिद्धान्तों का विस्तार, परिमार्जन, संशोधन परवर्ती विद्वानों ने किया।

हेनरी क्वेण्टिन ने अपने ग्रंथ 'एसे डी क्रिटीक टेक्स्टुअले' में लेकमैन प्रणाली को आगे बढ़ाते हुए अपनी प्रणाली प्रस्तुत की। इनकी मौलिक देन यह थी कि इन्होंने प्रतियों के शाखा निर्धारण हेतु सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि यदि एक प्रति का पाठ, दूसरी से मिलता है, फिर वहीं तीसरी से मिलता है और कुछ अंश तक वह दोनों से मिलता है, इसके विपरीत क्रम से चलने पर यह समानता नहीं मिलती जिसे क्वेण्टिन के शब्दों में पर कहा जा सकता है कि विपरीत क्रम से चलने पर फल शून्य या अर्द्ध शून्य मिलता है तो प्रथम प्रति या तो द्वितीय और तृतीय दोनों की आदर्श प्रति है और ये दोनों एक दूसरे में से किसी को आदर्श प्रतियाँ नहीं अथवा प्रथम प्रति द्वितीय एवं तृतीय में से एक ही प्रतिलिपि और दूसरी की आदर्श प्रति होगी।

'सर वाल्टर ग्रेग' ने शाखा निर्धारण की इस विधि को और आगे बढ़ाया। उन्होनें अपनी पद्धति द्वारा बताया कि एक प्रकार की प्रतियाँ जो परस्पर समान हैं पर दूसरे प्रकार की परस्पर समान प्रतियों से भिन्न हैं, उनके अलग–अलग समान पूर्वज होते हैं तथा प्रतियों में प्राप्त पाठों की समानता से ही पूर्वज प्रतियों के सुनिश्चित हो जाने की कोई नपी–तुली प्रणाली नहीं है। उसने इन दोनों सिद्धान्तों की बारीकियों का विचार किया।

'आर्किबैल्ड हिल' ने अपनी पद्धति द्वारा पाठ समस्या के सरलीकरण हेतु विभिन्न संभावनाओं के विकल्प से युक्त वंशवृक्षों के महत्त्व के मूल्यांकन का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। जहाँ प्रतियों के पाठ सम्बन्ध एकाधिक प्रकार से स्थापित हो सकते हैं, वहाँ उन सम्बन्धों के महत्त्व को आँकलित करने से पाठ समस्या सरल हो जाती है।

अमरीकी प्रोफेसर विण्टन ए0 डीयरिंग ने पाठानुसंधान की अपनी पद्धति को उपर्युक्त सभी पद्धतियों से विशिष्ट बताते हुये उसे 'पाठ विश्लेषण' कहा है। उन्होंने 'प्रति' और 'पाठ' के अन्तर को ध्यान में रखते हुये प्रति परम्परा और

पाठ – परम्परा को दो वस्तुएँ प्रतिपादित किया। प्रति द्वारा प्रदत्त पाठ एक मानसिक तथ्य हैं और पाठ प्रदत्त करने वाली प्रति एक शारीरिक क्रिया है। प्रतियों में सुरक्षित पाठ और पाठ का संवहन करने वाली प्रतियां दोनों ही रचना की पाठ–परम्परा की स्थिति निर्धारण में सहायक होती हैं।

प्रतियों की परम्परा का वंशवृक्ष मूलतः उनमें विद्यमान पाठ – विकृतियों के आधार पर बनता है। अतः प्रतियों का आनुवंशिक सम्बन्ध (ळमदमजपब त्मसंजपवदेीपच) प्रतिलिपि कार्य पर आधारित होता है। इसके प्रतिकूल पाठों का आनुवांशिक सम्बन्ध पाठों के अर्थ की इकाई की समानता एवं असमानता के आधार पर स्थापित होता है। चूंकि प्रतिलिपि कार्य और तज्जनित पाठ – विकृतियां भी पाठ – परम्परा के निर्धारण में सहायक होती हैं, अतः इन दो प्रकार के सम्बन्धों का अन्तर सर्वदा प्रकट नहीं हो पाता है।

डीयरिंग ने पाठ – परम्परा के अन्तर को प्रति परम्परा के अन्तर से भिन्न माना है और इसे एक सरल उदाहरण द्वारा अभिव्यक्त किया है। कल्पना कीजिये कि किसी प्रति में विद्यमान किसी वर्णन को दूसरा प्रतिलिपिकार चित्र द्वारा स्थानापन्न कर देता है तो यह प्रति की दृष्टि से तो अन्तर हुआ पर पाठ की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं हुआ क्योंकि अर्थ की इकाई इन दोनों प्रतियों में समान रह जाती है। एक वाक्य को उन्होंने इसके उदाहरण में प्रस्तुत किया है कि यदि एक प्रति में पाठ है–

The quick brown fox jumped over the lazy dog और दूसरी प्रति में यह पाठ इस रूप में है– The quick brown लोमड़ी का चित्र jumped over the lazy कुत्ते का चित्र तो प्रतियों में अन्तर होते हुये भी पाठ एक ही है।

इस प्रकार उन्होंने पाठ की परम्परा की प्रतियों को प्रतियों की परम्परा से भिन्न करते हुए प्रथम का विशेष महत्व प्रतिपादित किया। उन्होने अपने पूर्ववर्ती पाठानुसंधान के आचार्य की पद्धतियों के प्रति ऋण स्वीकार करते हुये उनकी महत्ता को भी माना है तथा अनुभव पर आश्रित कुछ सिद्धान्तों का भी उल्लेख किया है जिनमें पाठानुसंधान कार्य में सहायता मिलती है।

इन विद्वानों के प्रतिपादनों एवं सिद्धान्तों का सूक्ष्मता से अध्ययन करने पर यह विदित होता है कि विभिन्न प्रतियों के पाठों में मिलने वाले अन्तर कोई एक सारणी के नहीं होते। अलग–अलग रचनाओं की पाठ–परम्पराओं का अपना–अपना वैशिष्ट्य होता है जो रचना जितनी लोकप्रिय होती है, उसकी उतनी ही अधिक प्रतिलिपियाँ होती है और उनके पाठ उतने ही अधिक उलझनपूर्ण होते हैं। उनके पाठालोचक पाठ निर्धारण के मूल सिद्धान्तों के आलोक में उलझे हुए पाठकों के कंटकाकीर्ण मार्ग को पार करने के लिये स्वविवेक एवं तर्कों का सहारा लेते हैं उनके अपने अनुभव पूर्ववर्ती विद्वानों के अनुभवों में कुछ नवीन उपलब्धियाँ भी जोड़ते चलते हैं। इस प्रकार पाठानुसंधान के क्षेत्र में कार्ल लैकमैन से लेकर डीयरिंग तक सभी विद्वानों ने एक ही मूल सिद्धान्त को अपने– अपने अनुभवों से विकसित किया है, इनमें विरोध नहीं, प्रत्युत एक विकास क्रम दृष्टिगत होता है।

भारतीय भाषाओं में सबसे अधिक साधनों के साथ और बड़े ही मेधावी विद्वानों के निर्देशन में 'महाभारत' का सम्पादन हुआ। उसके 'आदि पर्व' का पाठ प्रस्तुत करते हुये डा0 विष्णु सीताराम सुकथांकर ने जो निष्कर्ष निकाले हैं। उनकी जानकारी भारतीय भाषाओं के पाठ सम्पादकों के लिये अनिवार्य है। उन्होंने 'लैकमैन' की पाठ – सम्पादन

प्रणाली को लक्ष्य करके लिखा : 'भाषा शास्त्रियों के प्राचीनतर स्कूल में प्राचीन पाठों के आलोचनात्मक संस्करण तैयार करने के लिये चार सीढ़ियां निर्धारित हैं: 1. सामग्री संग्रह 2 पाठ– चयन 3. पाठ सुधार 4. उच्चतर आलोचना ।

यह प्रणाली उस कार्य के लिये अति उत्तम है जिसके लिए इसका प्रयोग वांछित है, पर यह नहीं भूलना चाहिये कि अन्ततः यह इस बात पर निर्भर है कि कमोवेश उस पाठ की प्रति लिपियाँ और उनकी आदर्श प्रतियाँ ऐसी प्रतिलिपि – परम्परा से सम्बद्ध हों कि निर्णयक रूप से वे एक अधिकारिक मूलादर्श तक पहुंच सकें।

संदर्भ–

- पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धान्त, लीलाधर गुप्त, पृष्ठ 12
- ए मैनुअल अफटैक्चुअल एनलसिस, विण्टन ए0 डीयरिंग, पृष्ठ 7–9
- My method for the first time distinguishes that text conveyed by the manuscript - a mental phenomenon- from the manuscript conveying a text a physical phenomenon. It concerns only mental
- phenomenon, which one they have come into existence either continued to be recoverable from the physical records or else vanish for ever. - A manual of textual Analysis, Page 9,
- The older school of classical philogists distinguished from stages in the work of preparing critical edition of a classical text: (1) Henristics ie. assembling and arranging the entire material consisting of MSS and testimonia in the from geneological tree; (2) Recencio i.e., restoration of the text Archetype, (3) Emendatio i.e., restoration of the text of the author, and finally, (4) Higher criticism.

****